स्मर विपुल पुण्य निचय, स्मृतिमति गतिमनन्त, प्रज्ञाप्रभाकरिन्।
अतुलबल, विपुल विक्रम,
व्याकरणं दीपसहेनास्ति।।
स्मर विपुल निर्मलमनस्
त्रिमलमलप्रहीन शान्तमददोषं।
शुभ विमल शुद्ध चित्ता,
दानचरी, यादृशा ति पुरे।।
स्मर स्मर कुल कुलीना
शमथं शीव्रतं क्षमादमं चैव।
वीर्य बल ध्यान प्रज्ञा निषेविता
कल्पकोटि नियुतानि।।
स्मर स्मर अनन्तकीर्ते सम्पूजिता
ये ति बुद्धकोटि नियुतानि।
सत्वान् करुणायमानः
कालो अयं मा उपेक्षस्व।।

इन गाथाओं में निहित भावों का आशय है: हे विपुल पुण्यों के समूह, स्मृति, मति तथा गति तत्वबोध में असीम, हे प्रज्ञा के प्रभाकर, हे अनुपमेय बल वाले, हे विपुल पराक्रम वाले, दीपंकर भगवान्, अपने विषय के व्याकरण या भविष्यवाणी का स्मरण करो। हे विपुल तथा निर्मल मन वाले, हे तीन प्रकार के मलों से रहित, हे शान्त हुए मद तथा दोष वाले, हे पवित्र, मलिनता रहित तथा शुद्ध चित्त वाले, पुरा युग में जैसी दानचर्या तुमने की है, उसका स्मरण करो। हे कुल के कुलीन, खरब-खरब कोटि कल्पों में जिस शान्त समाधि शीलव्रत, क्षमा तथा दम, पराक्रम, बल, ध्यान एवं प्रज्ञा का भलीभांति सेवन किया है, उसका स्मरण करो, स्मरण करो। हे अनन्त कीर्ति वाले, सत्वों पर कृपा करते हुए, तुमने जिन खरब-खरब कोटि बुद्धों की पूजा की है, उनका स्मरण करो, स्मरण करो, यह समय है, उपेक्षा हरगिज मत करो।

ऐसी अनेक प्रकार की गाथाएं गेय रही हैं, ये प्रार्थना और निवेदन दोनों ही रूप में हैं और संगीति की ध्वनि से निकलकर करुणा हृदय बोधिसत्व का प्रेरित करती थीं कि वह बोधि पाने का समय है, उसकी उपेक्षा मत करो: एवं बहु प्रकारा संगीतिरवानु निश्चरा गाथा।

संगीति के स्वर-वाद्य:

इस काल के प्रधान वाद्यों में जो वाद्य अन्त:पुर में गूंजते थे, उनके नाम हैं: भेरियां यानी नक्कारे, मृदंग, पणव यानी ढोल, तूणव यानी विशेष प्रकार के हुडुक, वीणाएं, वल्लकी, सम्पताड़ यानी लम्बे-लम्बे मृदंग। ये किसी भी प्रकार की विचित्रता होने पर अपने आप बज उठते थे। बुद्ध के जन्म के अवसर पर इनका वादन छठवां पूर्व निमित्त माना गया है। तूण को एक मुंह वाला हुडक माना गया है। मुकुन्द नामक एक ढोल भी व्यवहार में था। इनके वादन में ऐसी प्रतिस्पर्द्धा होती थी कि देवतागण भी पीछे छूट जाते: श्रुत्व मधुरघोषं देवतापि स्पृहेयु:। जन्म परिवर्त में यह विवरण द्रष्टव्य है। मंगल के निमित्त घंटों को भी बजाया जाता था: घण्ट शतसहस्रा लडिता मंगलार्थं। मंगल शब्द ब्राह्मण सुनाते। स्तुतियों के साथ किंकिणियों का वादन शुभ माना जाता।

बाजों के वादन के साथ गुणगान करने की परंपरा आज की ही तरह थी। प्रचल परिवर्त की एक गाथा में कहा गया है कि सुन्दर बाजे-गाजे के साथ गाने-बजाने की लीलाओं द्वारा गुण के सागर बोधिसत्व के यश तथा गुण कहे जाते और देवताओं व मनुष्यों को हर्षित किया जाता: संगीति तूर्यरचितैश्च सुवाद्यकैश्च वर्णा गुणां कथयतो गुण सागरस्य।

इस तरह गाजे-बाजे के साथ गुणगान से प्राय: चित्त को आल्हादित किया जाता था: कुर्वाम् देवमनुजान प्रहर्षणीयं यं श्रुत्व बोधिविरचित्त जने जनेया।। अवतार की प्रार्थना में भी ऐसे ही स्वरों की स्थिति कही गई है। पूजा में भी वाद्ययन्त्रों से युक्त संगीत का प्रयोग होता था।

नटरंग का लालित्य

कुशीलवों अथवा नटों के कौशल को भी ललित लीला का रूप माना गया है। कभी उत्सवों और समज्जों में भी नटों के आयोजन देखने को मिलते थे। ललित विस्तर के धर्मालोक मुख परिवर्त में नटों के रंग का वर्णन हुआ है जो संगीत के साथ होते थे। इनको देखने के लिए लोगों का जमघट लगता था। इसको सामाजिक कहा गया है जिसका आशय है कि खेलकूद के जमावड़े के प्रेमी। नटों के खेलों के होने पर बड़ी संख्या में लोग अनुरंजन के लिए जमा होते थे और जमकर उनका आनन्द उठाते थे। जब बैठक ढीली हो जाती तो सामाजिक चले जाते। इसीलिए कहा गया है कि अप्सराओं के साथ विहार तथा संगीत तुलनात्मक दृष्टि से समान है: नटरंग तुल्यकल्पा: संगीति अप्सरोभि संवास:।

संगान के लिए स्त्री आदि प्रमुदित होकर प्रस्तुति देते, वे अपने गायन से रत्योत्पन्न करते, मद जगाते और इस तरह देवताओं व मनुष्यों को विनीत कर देते। संगीत के इस लालित्य की ओर ललित विस्तर में ध्यान दिया गया है: यद पुन: प्रमुदित रतिकर प्रमदा सुरुचिर सुमधुर प्रभणिषु तुरियै:। प्राय: गाथा गायन के लिए महिलाएं वाद्य वादन करके ही जागरण आदि करती थी: ''तूर्य संप्रवादितै: ''और'' तूर्य शब्दात् सुगतानुभावत:।''